मध्यप्रदेश राज्य

बनाम

बाबूलाल

दिसम्बर 3, 2007

[सी.के. ठक्कर एवं अल्तमस कबीर, न्यायमूर्ति]

दंड संहिता, 1860-धारा 376 (1)- दिनदहाडे चाकू का भय दिखाकर विवाहित महिला के साथ बलात्कार - विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि - सात वर्ष का कठोर कारावास (न्यूनतम सजा) - उच्च न्यायालय द्वारा सजा को पूर्व में भुगती दो माह तीन दिन की अवधि तक कम किया - अपील पर, अभिनिर्धारितः इस तथ्य के दृष्टिगत कि विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को सही दोषसिद्ध किया गया, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट किया गया, बिना 'उचित' और 'विशेष' कारणों के न्यूनतम निर्धारित सात साल से घटाकर कम करना अवैध - धारा 376 (1) के अंतर्गत विचारण न्यायालय द्वारा दी गई सात वर्ष का दण्ड न्यायसम्मत था - दाण्डिक विधि (संशोधन) अधिनियम, 1983 - सजा।

सजा/सजा देने - महिला के विरूद्ध यौन अपराध - सजा के लिये विचारणीय बिंदू - अभिनिर्धारितः ऐसे मामलों में अभियुक्त के साथ कठोरता से पेश आना चाहिए, ऐसे अपराधों का समाज पर पडने वाले प्रभावों का

ध्यान रखा जाना चाहिए -लचीला रूख या सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण कालांतर में विपरित प्रभाव पैदा करने वाला हो सकता है।

सिद्धांत - आनुपातिक सिद्धांत - सजा निर्धारण - व्याख्या की गई।

प्रत्यर्थी-अभियुक्त पर दिनदहाडे चाकू से धमकाकर एक विवाहित महिला से बलात्कार करने का मुकदमा चलाया गया। पीडिता ने घटना की जानकारी अपने पति पीडब्ल्यु 7 को दी। घटना की सूचना पीडब्ल्यु 8 (पीडब्ल्यु 7 का नियोक्ता) को भी दी गई। इसके बाद, पीडब्ल्यु 7 ने पुलिस को घटना की सूचना दी। अभियोजन पक्ष के साथ-साथ अभियुक्त की भी चिकित्सकीय जांच की गई। आरोपी ने झूठा फंसाने की दलील दी। परीक्षण के दौरान, पीडब्ल्यु 8 पक्षद्रोही घोषित हो गया। विचारण न्यायालय ने, अभियोक्त्री (पीडब्ल्यु 5), पीडब्ल्यु 7 और पीडब्ल्यु 9(डॉक्टर) के साक्ष्य पर भरोसा करते हुये माना कि आरोपी बलात्कार के अपराध का

दोषी था और उसे धारा 376 ओईपीसी के अंतर्गत दोषी ठहराया गया। यद्यपि, आरोपी को ओईपीसी की धारा 506 II के अंतर्गत बरी कर दिया गया। आरोपी को सात साल के कारावास व 2500/- रूपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई। अपील में, उच्च न्यायालय ने इस आधार पर, कि आरोपी ग्रामीण परिवेश का अनपढ कृषक था, भुगती हुयी सजा (यानी दो माह तीन दिन), तक कम कर दिया तथा 2500/- रूपये का जुर्माना लगाया गया था। इसलिये वर्तमान अपील प्रस्तुत की गयी।

न्यायालय द्वारा निर्णय अभिनिर्धारित किया गया :-

1.1. विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट किये गये प्रत्यर्थी-अभियुक्त की दोषसिद्धी के आदेश को दोषपूर्ण या अवैध नहीं कहा जा सकता है। विचारण न्यायालय ने सही माना है कि आरोपी ने अपराध किया है।अभियोक्त्री ने शपथ पर दी अपनी साक्ष्य में घटना के बारे में विस्तारपूर्वक बताया। विचारण न्यायालय ने सही कहा कि अभियोक्त्री ने अपने पति को घटना के बारे में सूचित किया, जिसने बदले में पीडब्ल्यु 8 नियोक्ता से संपर्क किया, लेकिन पीडब्ल्यु 8 ने कुछ नहीं किया। मामले की सूचना पीडिता ने अपनी नेत्रहीन सास को भी दी। विचारण न्यायालय ने सही माना कि शिकायत करने में कोई अस्पष्ट देरी नहीं हुई थी। अभियोक्त्री पीडब्ल्यु 5 के साक्ष्य पर न्यायालय द्वारा 'सीधे सपाट' साक्ष्य पर विश्वास किया गया और तदनुसार आरोपी को दोषी ठहराया गया। विचारण न्यायालय ने प्रतिरक्षा को सही ढंग से खारिज किया। [पैराs 7 an डी 13] [802-G-H; 803-A-B]

1.2. यदि कोई न्यायालय अभियोक्त्री की साक्ष्य को सत्य, भरोसेमंद और विश्वसनीय पाता है, तो दोषसिद्धि केवल उसकी गवाही के आधार पर दर्ज की जा सकती है और आगे किसी संपोषण की आवश्यकता नहीं है। [पैरा 14][803-C]

भरवाड़ा भोगींभाई हिर्जीभाई बनाम गुजरात राज्य, [1983] 3 ऐसेसी सी 217 और राजस्थान राज्य बनाम नारायण,[1992] 3 एस सी सी 615, अनुसरित।

1.3. उच्च न्यायालय ने अपील की अनुमति देकर और अपराधी को भा.दं.सं. की धारा 376 (1) के अंतर्गत दी गई सजा को 'पहले ही भुगती हुयी' अवधि, जो केवल दो महीने और सात दिन थी,को कम करके स्पष्ट रूप से गलती की, और गंभीर अवैधता की, जिसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई। ओईपीसी की धारा 376 की उपधारा 1 के अंतर्गत दी जाने वाली सजा को न्यूनतम से कम करने के लिये कोई 'पर्याप्त' ओर 'विशेष' कारण नहीं था । विचारण न्यायालय द्वारा भा.दं.सं. की धारा 376 की उपधारा (1) के अंतर्गत सही एवं उचित प्रकार से सात वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी गयी थी और उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधारभूत कारण नहीं था। [पारस 12 और 31] [802-एफ ; 810-जी-एच; 811-ए]

2.1. सज़ा अपराधी पर उसके द्वारा किए गए कानून के उल्लंघन के लिए सजा अधिरोपित की जाती है। एक बार जब किसी व्यक्ति पर किसी अपराध के लिए मुकदमा चलाया जाता है और सक्षम न्यायालय द्वारा दोषी पाया जाता है, तो यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह उसे कानून द्वारा निर्धारित सजा दे। दोषिसिद्धि पर दण्डादिष्ट करना परिणामिक और आनुषांगिक है। कानून में किसी व्यक्ति को अपराध के लिए दोषी ठहराए

जाने के बावजूद भी दण्डादिष्ट नहीं करने की परिकल्पना नहीं की गयी है। [पैरा 19] [805-ई]

दिनेश बनाम राजस्थान राज्य [2006] 3 ऐसेसी सी 771, अनुसरित।

इंग्लैंड के हैल्सबरी के नियम, चौथा संस्करण; खंड ll; पैरा 482, संदर्भित।

2.2. प्रत्येक न्यायालय को किए गए अपराध और लगाए गए दंड के अनुपात के साथ-साथ सामान्य रूप से समाज और विशेष रूप से अपराध के पीड़ित पर इसके प्रभाव के प्रति सचेत रहना चाहिए। [पैरा 21][806-सी]

बी.जी. गोस्वामी बनाम दिल्ली प्रशासन,[1974] 3 ऐसेसी सी 85, अनुसरित।

न्यायशास्त्र पर सैल्मंड, (2004); पृष्ठ 94, निदेशक, संदर्भित।

2.3. कुल मिलाकर दण्डात्मक विधि, आपराधिक आचरण की दोषीता के अनुसार सजा निर्धारित करने में आनुपातिकता के सिद्धांत का पालन करती हैं। न्यायाधीश सैद्धांतिक रूप से इस बात से सहमत रहे हैं कि सजा हमेशा अपराध के अनुरूप होनी चाहिए। यद्यपि, सजा अन्य ऐसेसुसंगत, वैध आधारों पर तय की जाती है, जो सजा के औचित्य को प्रकट करे। [पैरा 23] [807-बी,डी]

2.4. अपराध के सामाजिक प्रभाव, विशेष रूप से जहां यह महिलाओं के विरूद्ध अपराधों से संबंधित है, को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है तथा इसके लिए ऐसे ईलाज की आवश्यकता है जो स्वयं में एक नजीर बन सके। कम सजा देने या बहुत अधिक सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने का उदार रवैया लंबे समय में प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न करने वाला और सामाजिक हित के खिलाफ हो सकता है, जिसकी देखभाल, सुरक्षा और सजा प्रणाली में अंतर्निहित प्रतिरोध के माध्यम से मजबूत करने की आवश्यकता है। [पैरा 24][807-ई-एफ]

2.5. यौन हिंसा एक अमानवीय कृत्य होने के अलावा एक महिला की निजता और पवित्रता के अधिकार का गैरकानूनी उल्लंघन भी है। यह उनके सर्वोच्च सम्मान के लिए एक गंभीर आघात है और उनके आत्म-सम्मान और गरिमा को ठेस पहुँचाता है। यह पीडिता को अपमानित करता है और एक दर्दनाक अनुभव छोड़ जाता है। यह ठीक ही कहा गया है कि जहां एक हत्यारा पीड़िता के शारीरिक ढांचे को नष्ट कर देता है, वहीं एक बलात्कारी एक असहाय महिला की आत्मा को अपमानित और प्रदूषित करता है। इसलिए, अदालतों से अपेक्षा की जाती है कि वे महिलाओं के खिलाफ यौन अपराध के मामलों में पूरी संवेदनशीलता के साथ प्रयास करें और निर्णय लें। ऐसे मामलों से कठोर से कठोर तरीके से निपटने की जरूरत है।' जटिल अपवादों और जटिल दंडात्मक प्रावधानों की लंबी धाराओं की तुलना में महिलाओं के खिलाफ अपराध के मामलों में सामाजिक रूप से

संवेदनशील न्यायाधीश एक बेहतर सुरक्षा कवच है। [पैरा 25][807-जी ,एच, 808-ए]

2.6. जब एक बार किसी व्यक्ति को बलात्कार के अपराध में दोषी ठहरा दिया जाता है, तो उसके साथ कठोरता से पेश आना चाहिए। ऐसे मामलों में पर्याप्त सज़ा न देना, अंवाछित अनुग्रह या उदार रवैया अपनाना 'संभावित अपराधियों' को अपराध कारित करने के लिये प्रोत्साहित करने के समान होगा। अपराध के प्रति सार्वजनिक घृणा को न्यायालय द्वारा उचित सजा देकर प्रतिबिंबित करने की आवश्यकता है। [पैरा 26] [808-बी-सी]

दिनेश बनाम राजस्थान राज्य, [2006] 3 ऐसेसी सी 771, अनुसरित।

3.1. विधि आयोग की रिपोर्ट के अनुसार, संसद ने आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 1983 द्वारा भा.दं.सं. की धारा 375 और 376 में संशोधन किया । (1983 का अधिनियम 43)। धारा 376 की उप-धारा (1) अब धारा 376 (1) के तहत दोषी व्यक्ति को सात साल के कठोर कारावास की न्यूनतम सजा निर्धारित करती है, जब तक कि मामला परन्तुक के अंतर्गत न आता हो। भा.दं.सं. की धारा 376 की उप-धारा (1) का प्रावधान इस प्रकार न्यायालय को आदेश देता है कि यदि वह बलात्कार के अपराधी को सात साल के कठोर कारावास की न्यूनतम सजा से कम सजा देता है तो फैसले में 'पर्याप्त और विशेष कारण' दर्ज करें । इसलिए, कारणों को दर्ज करना कानून द्वारा आवश्यक न्यूनतम से कम सजा देने के लिए अनिवार्य

या पूर्व शर्त है। इसके अलावा, ऐसे कारण (i) 'पर्याप्त' और (ii) 'विशेष' दोनों होने चाहिए। 'पर्याप्त' और 'विशेष' क्या है यह कई कारकों पर निर्भर करेगा और सार्वभौमिक अनुप्रयोग के कानून के नियम के रूप में कोई स्ट्रेट-जैकेट फॉर्मूला निर्धारित नहीं किया जा सकता है। [पैरा 28 anडी 29] [809-डी-ई; 810-बी-सी]

3.2. वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश के अनुसार 'विशेष' और 'पर्याप्त' कारण थे; (i) प्रत्यर्थी 'ग्रामीण क्षेत्र का एक अनपढ़ कृषक' था और (ii) उस पर 2,500/- रुपये का जुर्माना लगाया गया था। फैसले में किसी अन्य कारण का उल्लेख नहीं किया गया है, न ही मामले के रिकॉर्ड से इसका पता चलता है। विद्वान न्यायाधीश के संबंध में हमारी सुविचारित राय में तथाकथित कारण न तो *'विशेष'* कहे जा सकते हैं और न ही *'पर्याप्त'।* [पैरा 30] [810-डी]

दाण्डिक अपिलीय क्षेत्राधिकारः दाण्डिक अपील संख्या 1658/2007

मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर के द्वारा दाण्डिक अपील संख्या 298/2003 में पारित अंतिम निर्णय व आदेश दिनांक 21.08.2023 के विरूद्ध।

डी.के. सिंह, सी.डी. सिंह, मेरूसागर सामंतराय ओर वैराग्य वर्धन अपीलार्थी की ओर से।

अनीश कुमार गुप्ता, उमेश बाबू चौरसिया, दीपशीखा भारती और रिता गुप्ता प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय द्वारा निर्णय अभिनिर्धारित किया गया :-

सी.के. ठक्कर, न्यायमूर्ति 1.विचारार्थ स्वीकार

2. वर्तमान अपील हमें मदन गोपाल कक्कड बनाम नवल दुबे ओर अन्य, (1992) 3 एससीसी 204 में माननीय न्यायमूर्ति श्री ऐसेरत्नावेल पांडियन की टिप्पणियों की याद दिलाती है कि "यौन उत्पीडन के अपराधी, जो सभ्य समाज के लिये खतरा हैं, को कठोरतम एवं बिना किसी दयाभाव के दंड दिया जाना चाहिए"। यौन उत्पीडन के एक मामले में न्यायमूर्ति द्वारा कानून की अदालतों पर इस तरह के अपराधों के अपराधियों से सख्ती से निपटने के अपने कर्तव्य पर जोर दिया गया। न्यायमूर्ति द्वारा निष्कर्षित किया गयाः

> "हम महसूस करते हैं कि अपराध गंभीर होने पर न्याय की तलवार उठाने वाले न्यायाधीशों को, उस तलवार का उपयोग अत्यंत गंभीरता से, पूर्ण रूप से ओर अंत तक करने में संकोच नहीं करना चाहिए"।

3. हमारे विचार में, यह मामला न केवल आकस्मिक, उदासीन ओर अकर्मण्य दृष्टिकोण को दर्शाता है, बल्कि एक ऐसे अपराधी को सजा देने में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए असंवेदनशील रवैये को भी दर्शाता है जिसने दिन-दहाडे एक विवाहित महिला के साथ बलात्कार करने का जघन्य अपराध किया था। अभियोजन का मामला यह था कि प्रत्यर्थी बाबूलाल ग्राम दौलतपुर, तहसील इक्छावर, जिला सीहोर, मध्यप्रदेश में

रहता था। 23 जुलाई 2002 को, दोपहर लगभग 12:00 बजे, अपनी ही टपरी में, उसने एक विवाहित महिला, अभियोक्त्री-पीडब्ल्यु 5, जिसकी उम्र लगभग 22 वर्ष थी, (इसके बाद 'पीडब्ल्यु5-एक्स' के रूप में संदर्भित) को आपराधिक अभित्रास कारित किया ओर उसके साथ बलात्कार किया। अभियोजन पक्ष के अनुसार, पीडब्ल्यु 5-एक्स अपने पति के साथ आरोपी के घर में रह रही थी। घटना वाले दिन जब वह टपरी पर ड्रम धो रही थी तभी आरोपी ने उसे पीछे से पकड लिया ओर जमीन पर पटक दिया। अभियोक्त्री - पीडब्ल्यु 5 चिल्लाई ओर विरोध किया, परंतु आरोपी ने उसे चाकू से धमकाया ओर उसके साथ बलात्कार किया। इसके बाद भी उसने उसे घटना की जानकारी किसी अन्य को देने पर जान से मारने की धमकी दी। शाम को, पीडब्ल्यु 5-एक्स ने अपने पति ओर अपनी सास दल्लूबाई, जो एक नेत्रहीन महिला थी, को यौन उत्पीडन के बारे में बताया। पीडब्ल्यु 8- रामचरण, जो कि पीडब्ल्यु 5 के पति पीडब्ल्यु 7- शिवनारायण का नियोक्ता था, को भी सूचित किया गया, जिसने आश्वासन दिया कि वह आरोपी से बात करेगा ओर पीडब्ल्यु 5 को डर के कारण जगह नहीं छोडने के लिये कहा। अगले दिन, यानी 24 जुलाई, 2002 को, जब शिव नारायण का बडा भाई आया, तब अभियोक्त्री (पीडब्ल्यु5-एक्स) ओर उसका पति (पीडब्ल्यु 7) पुलिस स्टेशन, इक्छावर गए ओर शिकायत दर्ज कराई। फिर पीडब्ल्यु 5-एक्स को मेडिकल जांच के लिए भेजा गया, साइट प्लान तैयार किया गया ओर गवाहों के बयान दर्ज किए गए। पीडब्ल्यु 5 की चिकित्सीय जांच की गई। आरोपी को भी मेडिकल जांच के लिए भेजा गया, जिसमें वह

संभोग करने में पूर्ण रूप से सक्षम पाया गया। अन्वेषण पूर्ण होने पर भारतीय दंड संहिता (ओईपीसी) की धारा 376 सपठित धारा 506 भाग (II) के अंतर्गत दंडनीय अपराधों में आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। आरोपी ने आरोपों से इंकार किया। आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अंतर्गत अपने बयान में, उसने कथन किया कि रामचरण-पीडब्ल्यु 8 से लिए गए ऋण की अदायगी से बचने के लिए, अभियोक्त्री (पीडब्ल्यु 5-एक्स) ने उसे मामले में झूठा फंसाया है।

4. विचारण न्यायालय द्वारा अभियोजन पक्ष द्वारा पेश की गयी साक्ष्य ओर विशेष रूप से पीडब्ल्यु 5-अभियोक्त्री, पीडब्ल्यु 7-अभियोक्त्री के पति शिव नारायण ओर पीडब्ल्यु 9- डॉक्टर मधु शर्मा तत्कालीन सहायक सर्जन सार्वजनिक स्वास्थ्य केन्द्र इक्छावर की सशपथ साक्ष्य पर विचार किया तथा यह विनिश्चित किया कि युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित हो गया है कि आरोपी ने बलात्कार का अपराध किया था। जहां तक पीडब्ल्यु 8- रामचरण का सवाल है, उसने अभियोजन का समर्थन नहीं किया तथा वह पक्षद्रोही घोषित हुआ है। यद्यपि विचारण न्यायालय ने आरोपी को ओईपीसी की धारा 506, II के तहत आरोप से बरी कर दिया।

5. सजा पर, विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को सुना, जिसने परिवीक्षा देने की प्रार्थना की, जिसे, हमारी राय में, कोर्ट ने उचित रूप से अस्वीकार कर दिया। ओईपीसी की धारा 376 की उपधारा (1) के आज्ञापक उपबंधों के आलोक में विचारण न्यायालय ने न्यूनतम सात वर्ष के कठोर

कारावास ओर 2,500/- (दो हजार पांच सौ) रूपये का जुर्माना अदा करने की सजा दी। जुर्माना अदा न करने पर आरोपी को छह माह के अतिरिक्त सश्रम कारावास भुगतने का आदेश दिया गया। जुर्माने की रकम अभियोक्त्री पक्ष एक्स को देने का आदेश दिया गया।

6. पीडित अभियुक्त ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर की। अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने दोषसिद्धि के फैसले को चुनौती नहीं दी, बल्कि सजा में दया ओर नरमी की प्रार्थना की। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के तर्क को स्वीकार किया ओर पाया कि आरोपी शुरू में 11 सितंबर, 2002 से 10 अक्टूबर, 2002 तक हिरासत में था ओर फिर फैसला सुनाए जानें के बाद उसे 23 जनवरी, 2003 को जेल भेज दिया गया, जब तक कि उसे 26 फरवरी, 2003 को जमानत नहीं मिल गई। विद्वान न्यायाधीश ने यह भी पाया कि आरोपी 'ग्रामीण परिवेश का एक अनपढ कृषक' था ओर उस पर 2,500/- रूपये का जुर्माना भी लगाया गया था। विद्वान न्यायाधीश के अनुसार, मामले के तथ्यों के दृष्टिगत दो महीने ओर तीन दिन के कारावास की सजा, जो अभियुक्त पहले ही भुगत चुका था, न्यायोचित कही जा सकती है ओर तद्नुसार अपील को आंशिक रूप से स्वीकार किया गया।

7. उच्च न्यायालय द्वारा पारित उक्त आदेश से व्यथित होकर, राज्य ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

8. 21 नवंबर 2005 को, प्रत्यर्थी के विरूद्ध नोटिस और जमानती वारंट जारी किया गया, जो उसे विधिवत तामील कराया गया। प्रत्यर्थी भी एक अधिवक्ता के जरिये उपस्थित हुआ। 19 मार्च, 2007 को जब मामले की सुनवाई हुई, तब प्रत्यर्थी-अभियुक्त की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने कहा कि उसके पास कोई कागजात नहीं हैं। इसलिए, न्यायालय ने आदेश दिया कि कागजात राज्य के अधिवक्ता द्वारा प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को दिए जाएं। इसके बाद मामले को अंतिम सुनवाई के लिए निश्चित किया गया।

9. हमने दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओ को सुना।

10. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा दी गई सजा को कम करके कानूनी रूप से गंभीर त्रुटि की है। उनका यह भी तर्क है कि ओईपीसी की धारा 376 की उपधारा (1) न्यूनतम सात साल के कठोर कारावास की सजा का प्रावधान करती है जो विचाराण न्यायालय द्वारा दी गई थी और उच्च न्यायालय के लिए उक्त आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था । उक्त प्रावधान के अंतर्गत अपराधी को अधिकतम दस वर्ष तक के कारावास से दण्डित किया जा सकता है। इसलिए, उच्च न्यायालय का सज़ा कम करना सही नहीं था और वह भी तब जब अभियुक्त ने केवल दो महीने और तीन दिन की सज़ा ही काटी थी। यह भी तर्क दिया गया कि सजा कम करने के लिए उच्च

न्यायालय द्वारा कोई 'पर्याप्त और विशेष कारण' अंकित नहीं किये गये अतः उस आधार पर भी आदेश कमजोर है। अधिवक्ता द्वारा तर्क दिया गया है कि उच्च न्यायालय को इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए था कि अपराध दिनदहाडे किया गया था। इसलिए, उन्होंने तर्क दिया कि विचारण न्यायालय के आदेश को बहाल करके उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द किया जाये।

11. प्रत्यर्थी-अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि अभियुक्त की स्थिति पर विचार करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा विवेक को अवैध रूप से प्रयुक्त किया गया नहीं कहा जा सकता है ओर इसमें कोई हस्तक्षेप वांछनीय नहीं है।

12. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओ को सुनने के बाद, हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने अपील की अनुमति देने और अपराधी पर लगाई गई सजा को 'भुगती हुयी' अवधि तक कम करने में स्पष्ट रूप से गलती की थी।

13. जहां तक प्रत्यार्थी की दोषसिद्धि का सवाल है, जो कारण उल्लिखित किये गये हैं, विचारण न्यायालय द्वारा जो निष्कर्ष दिया गया है, हमें उसमें कोई कमी नहीं मिली है। विचारण न्यायालय ने यह सही माना है कि घटना की दिनांक को दोपहर 12.00 बजे, आरोपी ने अपराध किया। अभियोक्त्री ने शपथपूर्वक अपनी गवाही में घटना के बारे में बताते हुए कहा

कि जब वह टपरी पर कोठी धो रही थी, तभी आरोपी ने पीछे से आकर उसे पकड़ लिया, खींचकर जमीन पर पटक दिया और उसके साथ बलात्कार किया। विचारण न्यायालय का यह निष्कर्ष भी सही है कि अभियोक्त्री ने अपने पति को घटना के बारे में सूचित किया, जिसने पीडब्लू8-रामचरण-नियोक्ता से संपर्क किया, लेकिन रामचरण-पीडब्लू8 ने कुछ नहीं किया। मामले की शिकायत पीड़िता ने अपनी सास दल्लूबाई को भी की, जो कि नेत्रहीन थी। पीडब्लू7-शिव नारायण- पीड़िता के पति ने अपने बड़े भाई को घटना के बारे में सूचित किया जब वह अगले दिन आया और उसके बाद प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफआईओर) दर्ज की गई। विचारण न्यायालय का यह निष्कर्ष भी सही है कि शिकायत दर्ज करने में कोई अस्पष्ट देरी नहीं हुई थी। अभियोजन पक्ष-पीडब्लू 5 के 'सीधे सपाट' साक्ष्य पर न्यायालय ने विश्वास किया और तदनुसार आरोपी को दोषी ठहराया गया। हम इस बात से पूरी तरह संतुष्ट हैं कि प्रत्यर्थी के खिलाफ अपराध को प्रमाणित मानकर विचारण न्यायालय ने तथ्य या कानून की दृष्टि कोई त्रुटि नहीं की है।

14. जैसा कि इस न्यायालय ने कई मामलों में विनिश्चित किया है कि यदि कोई न्यायालय अभियोक्त्री की साक्ष्य को सच्चा, भरोसेमंद और विश्वसनीय पाता है, तो बिना किसी पुष्टि कारक साक्ष्य के उसकी साक्ष्य मात्र के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है। इस संबंध में, हम भरवाडा भोगिनभाई हिरजीभाई बनाम गुजरात राज्य, (1983) 3 एससीसी 217 और

राजस्थान राज्य बनाम नारायण , (1992) 3 एससीसी 615 में इस न्यायालय के केवल दो प्रमुख निर्णयों का उल्लेख कर सकते हैं।

15. प्रथम मामले में इस न्यायालय ने न्यायमूर्ति एम.वी. ठक्कर के जरिये यह कहा है किः

"9 भारतीय परिवेश में एक नियम के रूप में पुष्टि के अभाव में यौन उत्पीडन की पीडिता की गवाही पर कार्यवाही करने से इंकार करना, घाव पर नमक छिडकने जैसा है। बलात्कार या यौन उत्पीडन की शिकायत करने वाली लडकी या महिला की साक्ष्य को संदेह, अविश्वास या संदेह के चश्मे से क्यों देखा जाना चाहिए? ऐसा करना एक पुरूष प्रधान समाज में पुरूष प्रधानता को उचित ठहराने जैसा है। हमें पश्चिमी दुनिया ,जिसके अपने सामाजिक मूल्य एवं जीवनशैली है, के दृष्टिकोण से विचलित हुये बिना भारतीय सामाजिक रीति रिवाजों, मूल्यों एवं जीवनशैली के दृष्टिगत इस बात पर ध्यान केन्द्रित रखते हुये, मनमानी दृष्टि अपनाये बिना, तार्किकता के साथ यह तय करना चाहिए कि यौन अपराध को सिद्ध करने हेतु पीडिता की साक्ष्य के संपोषण की आवश्यकता है अथवा नहीं। पश्चिमी दुनिया की सामाजिक परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में यौन अपराध स्थापित करने के लिये पुष्टि की आवश्यकता मानी जा सकती है। उक्त अवधारणा तन्की आधार पर लागू कर देने एवं भारतीय समाज के पूरी तरह से अलग माहौल, दृष्टिकोण, रीति-रिवाजों, प्रतिक्रियाओं और इसकी प्रोफ़ाइल की परवाह किए बिना इसे भारतीय धरती पर प्रत्यारोपित करना पूरी तरह से

अनावश्यक है। दोनों समाजों की पहचान अलग-अलग है, इसलिये समस्याओ का समाधान एक जैसा नहीं हो सकता है। यह कल्पना की जा सकती है कि पश्चिमी समाज में एक महिला कई कारणों से किसी पुरुष के खिलाफ यौन उत्पीड़न के संबंध में गलत आरोप लगा सकती है, जैसे:-

(1) महिला का पैसे ऐंठने का ओर्थिक मकसद भी हो सकता है - मुकदमे या लोक निन्दा का भय दिखाकर पैसा ऐठना।

(2) वह मनोवैज्ञानिक विक्षिप्तता से पीड़ित हो सकती है तथा उसके मनोचित्रण एवं कल्पनाओ से उत्पन्न पुरूष लोलुपता ओर उनके पीछा करने से बचने का रास्ता ढूंढ रही हो सकती है।

(3) वह वास्तविक या काल्पनिक गलतियों के लिए पुरुष से प्रतिशोध लेना चाह सकती है, हो सकता है कि उसके मन में किसी खास पुरुष अथवा पुरुषों के प्रति द्वेष हो, और वह हिसाब चुकता करने की मंशा रखती हो।

(4) वह किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा दुष्प्रेरित हो सकती है, जो आर्थिक लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से किसी व्यक्ति को व्यक्तिगत एवं राजनैतिक द्वेष के कारण समझौतापरक एवं शर्मनाक स्थिति में डालना चाहता है।

(5) वह हीन भावना के चलते बदनामी या प्रचार पाने के लिये या अपने अहंकार को संतुष्ट करने के लिये या अपनी आत्मभावना को संतुष्ट करने के लिये ऐसा कर सकती है।

(6) वह ईर्ष्या के कारण ऐसा कर सकती है।

(7) वह दूसरों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिये ऐसा कर सकती है।

(8) तिरस्कृत होने पर वह ऐसा कर सकती है।

16. दूसरे मामले, जो बलात्कार का ही था, में न्यायालय ने माना है कि जहां पर बलात्कार पीडिता एवं उसका पति पुलिस से संपर्क करने में संकोच करते हैं तो इस तथ्य के दृष्टिगत तीन दिन का विलंब संदेह उत्पन्न करने वाला कारक नहीं कहा जा सकता है। यह भी विनिश्चित किया गया कि जब तक साक्ष्य से यह दर्शित नहीं होता है कि उसके एवं उसके पति द्वारा अभियुक्त को अपराध में मिथ्या लिप्त करने के मजबूत कारण थे, सामान्यतः न्यायालय को घटना के संबंध में पीडिता के कथनों को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए।

17. मौजूदा मामले में, प्रत्यर्थी-अभियुक्त द्वारा बचाव में कहा गया था कि पीड़िता के पति ने पीडब्लू 8- रामचरण-नियोक्ता से श्रम शुल्क के लिए अग्रिम धन लिया था और चूंकि उसका उक्त राशि वापस करने का कोई इरादा नहीं था, इसलिए अभियोजन पक्ष ने मामले में आरोपी को झूठा फंसाया। हमारी सुविचारित राय में, विचारण न्यायालय ने बचाव को सही ढंग से खारिज कर दिया। इसलिए, हमारी राय में, विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए दोषसिद्धि के आदेश को दोषपूर्ण नहीं कहा जा सकता है और प्रत्यर्थी-अभियुक्त की दोषसिद्धि को अवैध नहीं कहा जा सकता है।

18. अगला प्रश्न सजा की पर्याप्तता से संबंधित है। हमें वैधानिक प्रावधानों के आलोक में इस सिद्धांत के साथ-साथ व्यवहारिक रूप से भी विचार करना है।

19. सज़ा अपराधी पर उसके द्वारा किए गए कानून के उल्लंघन के लिए अधिरोपित की जाती है। एक बार जब किसी व्यक्ति पर किसी अपराध के लिए मुकदमा चलाया जाता है और सक्षम अदालत द्वारा दोषी पाया जाता है, तो यह अदालत का कर्तव्य है कि वह उसे कानून द्वारा निर्धारित सजा दे। सज़ा देना दोषसिद्धि पर परिणामी और आनुषंगिक है। कानून में किसी व्यक्ति को सजा सुनाए बिना अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने की परिकल्पना नहीं की गई है।

20. सज़ा का उद्देश्य हेल्सबरी के इंग्लैंड के कानूनों (चौथा संस्करण; खंड II; पैरा 482) में इस प्रकार संक्षेप में बताया गया है;

"सज़ा के उद्देश्य अब प्रतिशोध, न्याय, निवारण, सुधार और सुरक्षा माने जाते हैं और आधुनिक सजा नीति इनमें से कई या सभी उद्देश्यों के संयोजन को दर्शाती है। प्रतिशोधात्मक तत्व का उद्देश्य अपराधी को उसके गलत आचरण के लिए अपराध के प्रति सार्वजनिक घृणा दिखाना और दंडित करना है। सजा के उद्देश्य के रूप में न्याय की अवधारणा का अर्थ यह है कि सजा अपराध के अनुरूप होनी चाहिए और यह भी कि समान अपराध के लिए समान सजा मिलनी चाहिए। सजा का महत्वपूर्ण पहलू

निरोधात्मक है और सजा का उद्देश्य न केवल वास्तविक अपराधी को

आगे से अपराध करने से रोकना है वरन् संभावित अपराधियों को कानून तोड़ने से भी रोकना है। आधुनिक विधि द्वारा अपराधी के सुधार पर जोर दिया जाना इस बात के महत्व को दर्शित करता है कि अपराधी के सुधार का कितना महत्व है, लेकिन इस विशेष उद्देश्य के प्रति न्यायिक राय भिन्न है, जहां आमतौर पर पुनर्वास के बनाये निवारण पर बल दिया जाता है। हालाँकि, न्यायिक विचार में सज़ा का मुख्य उद्देश्य अभी भी समाज की सुरक्षा है और जब सज़ा तय की जा रही हो तो अन्यबातों पर अक्सर केवल गौण विचार किया जाता है।

(ज़ोर दिया गया)

21. न्याय-वितरण प्रणाली में सजा सुनाना वास्तव में एक कठिन और जटिल प्रश्न है। प्रत्येक न्यायालय को किए गए अपराध और लगाए गए दंड के अनुपात के साथ-साथ सामान्य रूप से समाज और विशेष रूप से अपराध के पीड़ित पर इसके प्रभाव के प्रति सचेत रहना चाहिए।

22. बीजी गोस्वामी बनाम दिल्ली प्रशासन, (1974) 3 एससीसी 85 में, इस न्यायालय ने कहा हैः-

"अब सजा का प्रश्न हमेशा एक कठिन प्रश्न होता है, इसके लिए विभिन्न विचारों के उचित समायोजन और संतुलन की आवश्यकता होती है जो किसी दिए गए मामले में इसकी उचित मात्रा निर्धारित करने में न्यायिक मस्तिष्क से तौले जाते हैं। मोटे तौर पर सजा का मुख्य उद्देश्य यह है कि अभियुक्त को यह एहसास होना चाहिए कि उसने ऐसा कृत्य

किया है जो न केवल उस समाज के लिए हानिकारक है जिसका वह एक अभिन्न अंग है, बल्कि एक व्यक्ति और समाज के सदस्य के रूप में उसके अपने भविष्य के लिए भी हानिकारक है। सजा का प्रावधान इस प्रकार किया गया हैकि संभावित अपराधियों को रोककर और दोषी पक्ष को अपराध दोहराने से रोककर समाज की रक्षा करें; इसे अपराधी को सुधारने और पूरे समाज की भलाई के लिए उसे कानून का पालन करने वाले नागरिक के रूप में फिर से दावा करने के लिए भी डिज़ाइन किया गया है। इस प्रकार सजा निर्धारण में सजा के सुधारात्मक, निरोधात्मक एवं दण्डात्मक पहलू सजा निर्धारण हेतु सम्यक न्यायिक विचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालाँकि, आधुनिक सभ्य समाजों में, सुधारात्मक पहलू को कुछ हद तक अधिक महत्व दिया जा रहा है। बहुत नरम और बहुत कठोर दोनों ही सजायें अपनी प्रभावशीलता खो देते हैं। एक की प्रतिरोधकता समाप्त हो जाती है तथा दूसरा विफल हो जाता है क्योंकि उसमें अभियुक्त घोर अपराधी बन जाता है।" (ज़ोर दिया गया)

[न्यायशास्त्र पर सामण्ड भी देखें, (2004); पृष्ठ 94]

23. दंडात्मक कानून, कुल मिलाकर, आपराधिक आचरण की दोषीता के अनुसार सजा निर्धारित करने में आनुपातिकता के सिद्धांत का पालन करते हैं। न्यायाधीश सैद्धांतिक रूप से इस बात से सहमत हैं कि सजा हमेशा अपराध के अनुरूप होनी चाहिए। यद्यपि, व्यवहार में, सजा अन्य प्रासंगिक और सार्थक आधारों पर निर्धारित की जाती है। कभी-कभी यह

सुधारात्मक आवश्यकता ही होती है जो कम सजा को उचित ठहराती है। कभी-कभी जिन परिस्थितियों में अपराध किया जाता है वे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। कभी-कभी अपराध करने में अपराधी द्वारा दिखाए गए विचार-विमर्श की डिग्री ही महत्वपूर्ण होती है। इस प्रकार सज़ा देना एक नाजुक कार्य है जिसके लिए कौशल, प्रतिभा और कई कारकों पर विचार की आवश्यकता होती है, जैसे, अपराध की प्रकृति, कम करने या बढ़ाने वाली परिस्थितियाँ - जिनमें अपराध किया गया था, अपराधी का पूर्व आपराधिक रिकॉर्ड, यदि कोई हो, उम्र और पृष्ठभूमि, शिक्षा, घरेलू जीवन, सामाजिक समायोजन, भावनात्मक और मानसिक स्थिति, उसके सुधार और पुनर्वास की संभावनायें आदि। यह सभी ओर इसी तरह के अन्य आधार वैध रूप से, सजा की उचित्तता को प्रभावित करते हैं।

24. इसके अलावा, अपराध के सामाजिक प्रभाव, विशेष रूप से जहां यह महिलाओं के विरूद्ध अपराधों से संबंधित है, को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है तथा इसके लिए अनुकरणीय उदाहरण की आवश्यकता होती है। कम सजा देने या बहुत अधिक सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने का उदार रवैया लंबे समय में प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न करने वाला और सामाजिक हित के खिलाफ हो सकता है, जिसे सावधानी से, सुरक्षा और सजा प्रणाली में अंतर्निहित प्रतिरोध के माध्यम से मजबूत करने की आवश्यकता है।

25. यौन हिंसा एक अमानवीय कृत्य होने के अलावा एक महिला की निजता और पवित्रता के अधिकार का गैरकानूनी उल्लंघन भी है। यह उनके सर्वोच्च सम्मान के लिए एक गंभीर आघात है और उनके आत्म-सम्मान और गरिमा को ठेस पहुँचाता है। यह पीड़ित को अपमानित करता है और एक दर्दनाक अनुभव छोड़ जाता है। यह ठीक ही कहा गया है कि जहां एक हत्यारा पीड़िता के शारीरिक ढांचे को नष्ट कर देता है, वहीं एक बलात्कारी एक असहाय महिला की आत्मा को अपमानित और प्रदूषित करता है। इसलिए, अदालतों से अपेक्षा की जाती है कि वे महिलाओं के खिलाफ यौन अपराध के मामलों में पूरी संवेदनशीलता के साथ प्रयास करें और निर्णय लें। ऐसे मामलों से कठोरतापूर्ण तरीके से निपटने की जरूरत है।' जटिल अपवादों और जटिल दंडात्मक प्रावधानों की लंबी धाराओं की तुलना में महिलाओं के खिलाफ अपराध के मामलों में एक सामाजिक रूप से संवेदनशील न्यायाधीश एक बेहतर कवच है।

26. एक बार जब किसी व्यक्ति को बलात्कार के अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है, तो उसके साथ कठोर व्यवहार किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में पर्याप्त सज़ा न देना अनुचित उदारता या उदार रवैया अपनाना 'संभावित अपराधियों' को अपराध कारित करने के लिये प्रोत्साहित करने के समान होगा। समाज अब ऐसे गंभीर खतरों को सहन नहीं कर सकता। बलात्कार जैसे जघन्य अपराध के मामलों में समाज की न्याय के लिए उठायी गयी आवाज को न्यायालयों द्वारा सुना जाना चाहिए ओर पर्याप्त

सजा देनी चाहिए। अपराध के प्रति सार्वजनिक घृणा को न्यायालय द्वारा उचित सजा देकर प्रतिबिंबित करने की आवश्यकता है [दिनेश बनाम राजस्थान राज्य, (2006) 3 एससीसी 771]।

27. अब, वैधानिक प्रावधानों और किए गए संशोधनों के आलोक में कानूनी स्थिति पर विचार करें। विधि आयोग ने समय-समय पर इस न्यायालय द्वारा दिए गए विभिन्न निर्णयों पर ध्यान दिया, जिसमें यह पाया गया कि अपराध में वृद्धि और यौन शोषण के बढ़ते खतरे को देखते हुए, आवश्यक परिवर्तन किए जाने चाहिए। इसलिए, विधि आयोग ने अपनी 84 वीं रिपोर्ट में कहा हैः-

"अक्सर यह कहा जाता है कि जिस महिला के साथ बलात्कार होता है उसे दो संकटों से गुजरना पड़ता है- बलात्कार और उसके बाद का मुकदमा। जबकि पहला उसकी गरिमा को गंभीर रूप से चोट पहुँचाता है, उसके व्यक्तित्व को रोंद देता है, उसकी सुरक्षा भावना को नष्ट कर देता है।" दूसरा भी कोई छोटी बुराई नहीं है जिसमें उसे ऐसे अनजान वातावरण में दर्दनाक अनुभव से गुजरना पडता है जिसमें वह पूरे तंत्र एवं आपराधिक न्याय प्रणाली के केन्द्र बिंदू में रहती है।

विशेष रूप से, अब यह अच्छी तरह से स्थापित हो गया है कि अपरिपक्व उम्र की युवा लड़कियों के साथ यौन गतिविधियों का एक दर्दनाक प्रभाव होता है जो अक्सर जीवन भर बना रहता है, जो बाद में

विकारों का कारण बनता है, जब तक कि उसे ऐसा पारिवारिक जीवन एवं सामाजिक परिवेश ना मिले जो इन विकारों के प्रति संतुलन कारक हो।

बलात्कार 'स्वयं के हनन का चर्मोत्कर्ष' है। यह महिला के लिए ऐसी अपमानकारी घटना है जो उसमें दहशत एवं निर्बलता की भावना उत्पन्न कर देती है। पीडिता को सहानुभूति ,सुरक्षा तथा आत्मविश्वास की आवश्यकता होती है। इन जरूरतों के प्रति जन संवेदनहीनता, प्राथमिकी में उसका उल्लेख होना अपने आप में एक हमला बन कर रह जाता है।

जिस तरह से बलात्कार पीड़ितों के साथ आपराधिक न्याय प्रणाली द्वारा व्यवहार किया जाता है, उससे बलात्कार अद्वितीय अपराध की श्रेणी में आता है। बलात्कार की शिकार महिलाओं को कई कष्टों से गुजरना पड़ता है। यहकष्ट पुलिस द्वारा उनके उपचार से शुरू होते हैं और पुरुष-प्रधान आपराधिक न्याय प्रणाली के माध्यम से जारी रहते हैं। कई वास्तविक दोषी बलात्कारियों का बरी होना अन्याय की भावना को बढ़ाता है।

वास्तव में, कानून का ध्यान अभियोक्त्री की पुष्टी, सहमति ओर चरित्र पर केन्द्रित है एवं युक्तियुक्त संदेह से परे अपराध के प्रमाण के मानक के परिणामस्वरूप आम जनता, जिसके लिये कानून ओर कानूनी भाषा समझना कठिन है तथा जो सोचती है कि न्यायालय उतने अच्छे ढंग से नहीं चलते जितनी कोई उम्मीद करता है, का कानूनी प्रणाली से विश्वास घटता है।"

28. विधि आयोग की रिपोर्ट के अनुसार, संसद ने आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 1983 द्वारा ओईपीसी की धारा 375 और 376 में संशोधन किया । (1983 का अधिनियम 43)। धारा 376 की उप-धारा (1) अब धारा 376 (1) के तहत दोषी व्यक्ति को सात साल के कठोर कारावास की न्यूनतम सजा निर्धारित करती है ,जब तक कि मामला प्रावधान के अंतर्गत न आता हो। उपबंध के साथ उपधारा (1) यह उल्लिखित करती हैः-

376. बलात्कार के लिए सज़ा

(1) जो कोई भी, उपधारा (2) द्वारा प्रदान किए गए मामलों को छोड़कर, बलात्कार करेगा, उसे किसी भी अवधि के लिए कारावास से दंडित किया जाएगा जो सात साल से कम नहीं होगा, लेकिन जो जीवन भर के लिए हो सकता है या जिसकी अवधि दस वर्ष तक हो सकती है और जुर्माने के लिए भी उत्तरदायी होगा जब तक कि बलात्कार करने वाली महिला उसकी अपनी पत्नी न हो और बारह वर्ष से कम उम्र की न हो, ऐसे मामलों में, उसे एक अवधि के लिए कारावास की सजा दी जाएगी। दो साल तक की सजा या जुर्माना या दोनों हो सकते हैं:

न्यायालय निर्णय में उल्लिखित पर्याप्त और विशेष कारणों से सात साल से कम अवधि के कारावास की सजा दे सकता है।

(जोर दिया गया)

29. ओईपीसी की धारा 376 की उप-धारा (1) का प्रावधान इस प्रकार न्यायालय को आदेश देता है कि यदि वह बलात्कार के अपराधी को सात साल के कठोर कारावास की न्यूनतम सजा से कम सजा देता है तो फैसले में 'पर्याप्त और विशेष कारण' दर्ज करें । इसलिए, कारणों को दर्ज करना कानून द्वारा आवश्यक न्यूनतम से कम सजा देने के लिए अनिवार्य या पूर्व शर्त है। इसके अलावा, ऐसे कारण (i) 'पर्याप्त' और (ii) 'विशेष' दोनों होने चाहिए। 'पर्याप्त' और 'विशेष' क्या है यह कई कारकों पर निर्भर करेगा कोई सार्वभौमिक अनुप्रयोग के कानून के नियम के रूप में कोई स्ट्रेट-जैकेट फॉर्मूला तय नहीं किया जा सकता है।

30. वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश के अनुसार 'विशेष' और 'पर्याप्त' कारण यह थे; (i) प्रत्यर्थी 'ग्रामीण क्षेत्र का एक अनपढ़ कृषक' था और (ii) उस पर 2,500/- रुपये का जुर्माना लगाया गया था। फैसले में किसी अन्य कारण का उल्लेख नहीं किया गया है, न ही मामले के रिकॉर्ड से इसका पता चलता है। विद्वान न्यायाधीश के संबंध में हमारी सुविचारित राय में तथाकथित कारण न तो 'विशेष' कहे जा सकते हैं और न ही 'पर्याप्त'। इसके विपरित विशेष अनुमति याचिका में राज्य की ओर से यह कहा गया है कि विद्वान न्यायाधीश, धारा 304, 307, 376 जैसे गंभीर अपराध की सजा को भुगती हुयी सजा तक कम करने के आदेश पारित करने के आदि हैं। उनके द्वारा तय किए गए कुछ मामलों की सूची भी दी गई है। हमारा ध्यान विद्वान राजकीय अधिवक्ता

द्वारा इस ओर भी आकर्षित किया गया है कि यह न्यायालय कई मामलों में इन्हीं विद्वान न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णयों को रद्द कर चूका है।

31. हमारे मतानुसार इस अपील में उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश द्वारा आलौच्य आदेश के जरिये विचारण न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी पर अधिरोपित की गई सजा को 'भुगती हुई सजा दो माह तीन दिन तक' कम करके गंभीर अवैधता कारित की है जिससे "न्याय का हन्न" हुआ है। धारा 376 (1) भा.द.सं. द्वारा निर्धारित न्यूनतम सजा से कम सजा अधिरोपित करने का छोटा या बडा कोई भी 'उचित' ओर 'विशेष' कारण नहीं है। इसलिये आदेश अपास्त किये जाने योग्य है। हमारी राय में मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में विचारण न्यायालय द्वारा धारा 376 (1) भा.द.सं. के अंतर्गत सात वर्ष सजा के कारावास की सजा का दण्ड दिया जाना पूर्णतया उचित एवं न्याय सम्मत था ओर इसलिये उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था। अतः अपील स्वीकार किये जाने योग्य है।

32. उपर दिये कारणों से राज्य द्वारा प्रस्तुत अपील मंजूर की जाती है। दोषसिद्धि का जो आदेश विचारण न्यायालय द्वारा पारित किया गया तथा जिसकी उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई है, वह यथावत रखा जाता है यद्यपि विचारण न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी अभियुक्त पर उचित प्रकार से अधिरोपित सात वर्ष के कारावास को कम करके उच्च न्यायालय द्वारा त्रुटी की गई है, इसलिये हम विचारण न्यायालय के आदेश के उस हिस्से को

पुनर्स्थापित करते हैं जिसमें विचारण न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी को सात वर्ष के कारावास की सजा निर्दिष्ट की है, कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रत्यर्थी अभियुक्त द्वारा जो सजा पहले ही भुगती जा चुकी है उसका समायोजन किया जायेगा।

33. तदनुसार आदेश दिया गया।

अपील मंजूर

यह अनुवाद ओर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्री नेपाल सिंह, ओर.जे.एस. (जिला न्यायाधीश संवर्ग) द्वारा किया गया है।

<u>अस्वीकरणः</u>

यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है ओर किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक ओर आधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा ओर निष्पादन ओर कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।